बिहार सरकार

पशु एवं मत्स्य संसाधन विभाग
बिहार, पटना

प्राणिरुजा रोग

जानकारी एवं बचाव

पशु स्वास्थ्य एवं उत्पादन संस्थान, बिहार, पटना

प्राणिरूजा रोग

ऐसी बीमारियाँ जो पशुओं से मनुष्य में और मनुष्य से पशुओं में होती है उसे प्राणिरूजा रोग कहा जाता है। विश्व में लगभग 200 से अधिक प्रकार के पशुजन्य रोग हैं उदाहरणार्थ–एन्थ्रेक्स, टी.बी., बर्डफ्लू, रेबीज, ऐकीनोकोकोसिस इत्यादि ।

प्राणिरूजा रोग किसके द्वारा होता है ?

प्राणिरूजा रोग जीवाणु, विषाणु, फंफूद, परजीवियों इत्यादि के द्वारा होता है।

1. जीवाणु द्वारा :– एन्थ्रेक्स, ब्रुसेलोसिस, टी.बी. लेप्टोस्पाईरोसिस इत्यादि।
2. विषाणु द्वारा :– रेबीज, निपाफीवर, जापानीज इन्सेफेलाइटिस, बर्ड फ्लू , स्वाइन फ्लू इत्यादि।
3. परजीवी द्वारा :– ऐकीनोकोकोसिस इत्यादि।
4. फंफूद द्वारा :– रिंग वर्म, डरमैटोफिलोसिस इत्यादि।

प्राणिरूजा रोग होने की अधिक संभावना किनको होती है ?

वैसे तो यह बीमारी किसी भी उम्र में किसी भी व्यक्ति को हो सकती है परन्तु निम्नलिखित व्यक्तियों में अधिक होने की संभावना रहती है–

1. **नवजात शिशु एवं बच्चे** :– रोग प्रतिरोधक क्षमता पूर्ण रूप से विकसित नहीं होने एवं कुछ खराब आदतें जैसे मुँह में हाथ लेना, किसी भी वस्तु (मल–मूत्र, मिट्टी) को हाथ से छूने की प्रवृति, गंदगी के बारे में जानकारी ना होना इत्यादि के कारण पशुजन्य रोग होने की संभावना बढ़ जाती हैं।

2. **गर्भवती महिलायें** :– गर्भकाल के समय शरीर अधिक तनाव में रहता है एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी हो जाती है।

3. **बुजुर्ग व्यक्ति** :– उम्र के साथ–साथ शारीरिक रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर हो जाती है और पशु जन्य रोग होने की संभावना बढ़ जाती है।

4. **रोगग्रस्त व्यक्ति** :– ऐसे व्यक्ति जिनका कैंसर का इलाज चल रहा है या HIV से ग्रसित हैं उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होती है और प्राणीरूजा रोग होने की संभावना बढ़ जाती है।

5. **पशु चिकित्सक/पशुपालक/किसान/ चिड़िया घर में पशुओं के देख–रेख करने वाले / वन्य जीव प्राणियों के सम्पक में रहने वाले, पशुवधशाला में काम करने वालों** को प्राणीरूजा रोग होने की संभावना अधिक रहती है।

प्राणिरूजा रोग कैसे होता है ?

रोगाणु विभिन्न माध्यमों से पशु अथवा मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर प्राणिरूजा रोग फैलाते हैं जैसे –

1. **मुख के द्वारा :–** जब दूषित भोजन या पानी आहार नली द्वारा मनुष्य के शरीर में प्रवेश करता है. पशु जन्य खाद्य पदार्थ जैसे दूध, माँस, अंडा सही ढंग से पका हुआ ना हो या साग, सब्जी, फल स्वच्छ पानी से ठीक से धोया हुआ न हो तब प्राणिरूजा रोग होने की संभावना हो सकती है ।
2. **वायु माध्यम से** :– जब किसी रोगग्रस्त पशु के द्वारा कीटाणु वायु में आते हैं और स्वस्थ मनुष्य के साँस लेने के क्रम में शरीर में प्रवेश कर जाते हैं तब प्राणिरूजा रोग होने की संभावना बढ़ जाती हैं। रोगग्रस्त पशुओं के मल–मूत्र, धाँसने, गर्भपात होने पर उसके द्रव्य, जेड़, योनि स्राव से वातावरण, मिट्टी दूषित हो जाते हैं और उसी वातावरण में या दूषित मिट्टी, धूल कण के रूप में, साँस लेने के समय शरीर में प्रवेश करते हैं ।
3. **सीधा सम्पर्कः–** जब कीटाणु शरीर पर खुले घाव, खरोंच, आँखों के द्वारा या त्वचा के सीधे सम्पर्क में आकर शरीर के अन्दर प्रवेश करता है। कभी–कभी रोगग्रस्त पशु के काटने पर भी उससे कीटाणु शरीर में प्रवेश कर जाते हैं ।
4. **वेक्टर (मच्छर, मक्खी, चीचड़ियाँ)** :– जब रोगग्रस्त पशु का खून चूसकर वेक्टर स्वस्थ व्यक्ति को काटते हैं तब कीटाणु शरीर में प्रवेश करता है और बीमारी शुरू हो सकती है ।
5. **फोमाईटस :–** कपड़ा, जूता, ब्रश, बरतन, रस्सी, सुई, चश्मा, इत्यादि के द्वारा भी कीटाणु एक जगह से दूसरे स्थान पर फैलते हैं एवं इनके संपर्क में आने से स्वस्थ व्यक्ति भी बीमार हो सकता है ।

प्राणिरूजा रोग के प्रमुख कारक

बढ़ती आबादी, बढ़ता शहरीकरण जंगलो की अंधाधुध कटाई, परिवर्तित जीवनशैली (रहन–सहन, खान–पान), अधिक व्यस्तता, अधिकांश जनसंख्या का एक स्थान से दूसरे स्थान पर आना–जाना, तापमान में अप्रत्याशित कमी/वृद्धि, प्राकृतिक आपदाएं (बाढ़–सुखाड़, भूकंप इत्यादि) इसके प्रमुख कारक हैं।

मनुष्यों एवं पशुओं को प्रभावित करनेवाले मुख्य प्राणिरूजा रोग निम्नलिखित हैं –

1. एन्थ्रेक्स

एन्थ्रेक्स एक जीवाणुजनित पशुजन्य बीमारी है जो मुख्यतः गाय, भैंस, भेड़ तथा बकरी को प्रभावित करता हैं। कभी–कभी यह बीमारी घोड़ों तथा हाथी में भी देखी जाती है। मनुष्यों में यह बीमारी बीमार पशु के सम्पर्क में रहने से फैलती है।

फैलाव – पशुओं में यह बीमारी प्रदूषित जल, भोजन, घाव के संक्रमण तथा जीवाणु से प्रदूषित हवा में साँस लेने से होती है। यह स्पोर उत्पन्न करने वाला जीवाणु है। इसके स्पोर सूर्य के तापमान में 6 से 10 घंटों मे नष्ट हो जाते है। परन्तु अनुकूल वातावरण में ये स्पोर वर्षो तक जीवित रहकर जीवाणु को जन्म देते रहते हैं। रोगग्रस्त पशु के शरीर से निकलने वाले द्रवों एवं रक्त में इसके जीवाणु उपस्थित रहते है। ऊन की फैक्ट्रीयों में काम करने वाले लोगों में नाक के द्वारा स्पोर शरीर में प्रवेश करते हैं। पशुओं को काटने वाली मक्खियाँ जब रोगग्रस्त पशु के खून को चूसकर स्वस्थ पशु को काटती है तब भी यह रोग फैलता है। पशुवधशालाओं में कार्य करने वाले मनुष्यों तथा रोगों से बचाव हेतु टीका लगाते समय पशु चिकित्सक, भैक्सीनेटर में कभी–कभी किसी घाव या खरोंच के द्वारा स्पोर शरीर में प्रवेश कर रोग का कारण बनते है।

लक्षण — पशुओं में यह बीमारी मुख्यतः परएक्यूट, एक्यूट तथा क्रोनिक तीन अवस्था में पायी जाती है। परएक्यूट अवस्था में संक्रमित जानवर की मृत्यु बीमारी के 24 घंटे के भीतर बिना किसी लक्षण के हो जाती है। मृत्यु के पश्चात् मुँह, नाक, मल द्वार से रक्त स्त्राव होता है। एक्यूट अवस्था में पशुओं में तीव्र ज्वर, भूख न लगना, श्लेष्मिक झिल्ली में लालिमा, तीव्र श्वॉस तथा हृदय गति, शरीर में जगह–जगह सूजन आदि मुख्य लक्षण है।

मनुष्यों में यह बीमारी मुख्यतः पशु जन्य उत्पाद जीविकोपार्जन से संबंधित है यथा जानवरों के ऊन के व्यवसाय, चमड़ा व्यवसाय से संबंधित व्यक्तियों में यह पायी जाती है।

मनुष्यों में यह बीमारी तीन प्रमुख रूप में पायी जाती है–

1. चर्म से संबंधित, 2. साँस से संबंधित 3. पाचन तंत्र से संबंधित जो संक्रमित जानवर के अधपके माँस को खाने से होता है।

बचाव —

- स्वस्थ पशुओं को साल में एक बार एन्थ्रेक्स का टीका अवश्य लगवाना चाहिए।
- ऊन, चमड़ा व्यवसाय से जुड़े व्यक्तियों को काम करते वक्त हाथों में दस्ताना का उपयोग अवश्य करना चाहिए।
- सामान्य परिस्थितियों में इस रोग से मृत्यु होने की संभावना पर शव परीक्षण वर्जित है। किसी भी हालत में पशु की खाल नहीं उतारनी चाहिए और न ही शव परीक्षण हेतु लाश को खोलना चाहिए। लाश को जलाना भूमि में गाड़ने की अपेक्षा अधिक उचित है।

2. ब्रुसेलोसिस

यह गो पशुओं एवं बकरियों में **ब्रुसेला** नामक जीवाणु से फैलने वाला संक्रामक रोग है। भैंसों से ज्यादा यह गायों में होता है। जानवरों से मनुष्यों में यह बीमारी कच्चे दूध या कच्चे दूध से बने पदार्थों के सेवन करने से फैलती है।

यह बीमारी बीमार जानवर में गर्भपात होने के बाद उसके गर्भ से निकले हुए स्त्राव के द्वारा फैलती है। गर्भपात हो जाने के बाद गर्भाशय में जब तक सूजन रहता है तब तक निकलते स्त्राव से बीमारी फैलती रहती है। इसके जीवाणु चारा पानी के द्वारा स्वस्थ पशुओं के भोजन नली से शरीर में प्रवेश करते हैं। यह बीमारी संक्रमित दूध, रक्त, मूत्र, वीर्य द्वारा फैलती है। त्वचा एवं कंज्कटाइवा के द्वारा भी स्वस्थ पशुओं में फैलता है।

लक्षण — पशुओं में अंतिम तिमाही अर्थात् गर्भावस्था के छठे से नौवें माह में गर्भपात का हो जाना, तेज बुखार, बेचैनी, कष्टप्रद श्वास, शारीरिक दुर्बलता, भग में सूजन होकर बादामी रंग का स्त्राव निकलना, अयन फूलकर लाल दिखना, गर्भाशय में सूजन, जेर का समयानुसार न गिरना इत्यादि इसके प्रमुख लक्षण है। इसके अलावा प्रभावित पशुओं के जोड़ों मे सूजन पैदा कर सकता है।

मनुष्यों में सर्दी जुकाम जैसे लक्षण बुखार, रात में पसीना, बदन में दर्द, जोड़ों मे सूजन, रूक–रूक कर बुखार आना या उतार–चढ़ाव वाला बुखार, अण्डकोष में सूजन एवं दर्द इत्यादि इसके प्रमुख लक्षण हैं।

बचाव –

- अगर पशुओं में गर्भपात हो जाता है तो तुरन्त पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें। गिरे हुये भ्रूण, जेर तथा उसके सम्पर्क में आये सभी पदार्थों को जला देना चाहिए अथवा गहरे गढ़ढ़े में गाड़कर ऊपर से चूना डालकर नष्ट कर देना चाहिए।
- रोगी के शरीर के पिछले भाग एवं जननेन्द्रियों के आस–पास लगी गंदगी को सुसुम पानी से धोने के बाद एंटीसेप्टिक लोशन से साफ कर देना चाहिए।
- पशु जहाँ पर रहता है वहाँ फिनाईल से अच्छी तरह धोना चाहिए।
- स्वस्थ पशुओं का एगलूटीनेशन टेस्ट कराना चाहिए। एगलूटीनेशन टेस्ट सकारात्मक होने पर बीमार पशुओं को स्वस्थ पशुओं से अलग रखना चाहिए।
- मनुष्य को दस्ताना, चश्मा, गम बुट्स पहन कर साफ–सफाई करना चाहिए एवं बाद में उन सबको भी धोना चाहिए, हाथ साबुन से धोना चाहिए।
- दूध को हमेशा उबाल कर पीना चाहिए।

3. क्षय रोग (टी0 बी0)

यह एक जीवाणुजनित छूत का रोग है जो पूरे विश्व एवं सभी पशुओं तथा मनुष्यों में पाया जाता है। इस रोग से हर वर्ष हजारों पशु एवं मनुष्य प्रभावित होते है। मनुष्यों में होनेवाले टी0बी0 का 10 प्रतिशत जानवरों से ही होता है।

फैलाव – मनुष्यों में मुख्यतः यह रोग कच्चे दूध के पीने से या सही ढ़ंग से उबाल कर नहीं पीने से होता है। यह बीमारी बीमार पशु के दूध, जूठा व दूषित चारा, पानी, मल–मूत्र, कफ एवं सम्पर्क में आये बर्तनों द्वारा, पशु के मुख में प्रवेश पाकर शरीर के अंदर पहुँच जाते है। इसके कण हवा में कुछ समय तक तैरते रहते है एवं आस–पास स्वस्थ पशु या मनुष्य के साँस लेने से श्वास नली में प्रवेश पाकर शरीर में पहुँच जाते है। अयन की चिकित्सा करते समय संक्रमित टीट साईफन द्वारा टीट केनाल के रास्ते रोग शरीर में प्रवेश करता है। साफ सफाई न होना, अंधेरा, बिना हवादार गंदे मकान में रहना भी इसके मुख्य कारक है।

लक्षण –यह रोग अधिक समय तक प्रभावित करने वाला रोग है जो धीरे–धीरे शरीर पर अपना प्रभाव डालता है। यह रोग बिना लक्षण प्रकट किये हुए महीनों चलता रहता हैं। यह रोग विशेष रूप से फेफड़ा, अयन और पेट को प्रभावित करता है। जिस भाग पर जीवाणु आक्रमण करते है उसी के अनुसार लक्षण प्रकट होते है।

- श्वसन प्रणाली – खाँसना, साँस में आवाज, तापमान का उतार चढ़ाव, भूख प्यास की कमी, सुस्ती, लगातार दुर्बल एवं जीर्ण होते जाना, पशु का सीधा खड़ा होना एवं पसलियों को दबाने पर दर्द।
- पाचन प्रणाली – पाचन शक्ति बंद, पेट में दर्द, गोबर पतला होना, अंत में पीब अथवा ऑव मिश्रित गोबर होना।
- अयन – पिछला स्तन प्रभावित, अयन सख्त एवं दबाने पर दर्द न होना आदि प्रमुख लक्षण है। दूध दुहने के बाद अयन भलीभाँति सिकुड़ता नही, दूध पहले पतला पानी जैसा, बाद में फटा हुआ होता है।

बचाव

- बीमार पशुओं को स्वस्थ पशुओं से अलग रखना चाहिए।
- रोगग्रस्त पशुओं का दूध कच्चा नही पीना चाहिए। दूध को दो से तीन बार अच्छे ढ़ंग से उबाल कर पीना चाहिए।
- रहने का स्थान साफ–सुथरा, खुला, हवादार, रोशनीयुक्त होना चाहिए।
- अगर मनुष्यों में लगातार खाँसी, खून मिश्रित बलगम का आना एवं साँस लेने में कठिनाई जैसे लक्षण प्रकट हो तो उन्हें निकटतम स्वास्थ्य केन्द्र पर जाकर जाँच एवं इलाज कराना चाहिए।

4. लेप्टोस्पाईरोसिस

यह बीमारी **लेपटोस्पाईरा** नामक जीवाणु से मनुष्य एवं जानवर दोनों में होता है। इस बीमारी का प्रभाव पूरे विश्व में है। यह बीमारी सभी जंगली एवं पालतू जानवरों (गाय, भैंस, बकरी, सुअर, घोड़ा एवं कुत्ता) में मिलती है। पानी में रहने वाले स्तनधारी प्राणी भी इस बीमारी से प्रभावित होते हैं।

फैलाव –यह बीमारी मुख्यतः संक्रमित पानी के पीने से होता है। इस बीमारी की संभावना बाढ़ के समय/बाढ़ के बाद ज्यादा बढ़ जाती है। इस बीमारी का जीवाणु जानवरों (मुख्यतः चूहा) के मूत्र में मिलता है जो पानी या मिट्टी में मिलकर एक सप्ताह से लेकर कई महीनों तक जिन्दा रहता है। स्वस्थ जानवर संक्रमित मिट्टी या पानी से संपर्क में आकर बीमार होता है। इसका जीवाणु शरीर में मौजूद किसी खुले घाव के संपर्क में आकर, दूषित पानी के पीने से या श्वास नली के द्वारा शरीर में प्रवेश करता है। यह रोग मुख्यतः चूहे के मूत्र के द्वारा फैलता है।

लक्षण – गाय, भेंड़, बकरी और सुअरों में बुखार एवं गर्भ से संबंधित समस्याएँ पैदा होती है। घोड़ों में आँखों का लाल हो जाना, रोशनी के प्रति संवेदनशील, आँखो का बार–बार झपलाना एवं आँखो का धुंधलापन जैसे लक्षण मिलते है। कुत्तों में बुखार उल्टी, आंत में दर्द, दस्त, कमजोरी, माँस में दर्द, कड़ापन होता है। किडनी भी प्रभवित होती है।
मनुष्य में अधिकत्तर सर्दी जुकाम जैसे लक्षण दिखते है। इसके अलावा उल्टी, जोंडीस (पिलीया) गर्दन में ऐंठन जैसा लक्षण पाया जाता है। गंभीर रूप में लिवर और किडनी प्रभावित होने की संभावना रहती है।

बचाव

- अपने जानवर को जंगली जानवरों से, दूषित मिट्टी और पानी के संपर्क में आने से बचाना चाहिए।
- पीने का पानी साफ सुथरा होना चाहिए।
- चूहा इस बीमारी का संवाहक है, अतः उसके आबादी पर नियंत्रण अत्यावश्यक है।
- बाढ़ के समय पानी में कम से कम जाना चाहिए और अगर पैर में या शरीर के किसी भाग में कोई धाव है तो बिल्कुल नहीं जाना चाहिए।

5. इ–कोलाई एवं सालमोनेलोसिस

दोनों ही बीमारियाँ जीवााणुजनित एवं मनुष्य और जानवर दोनों में होती है।

फैलाव – मनुष्यों में दोनों बीमारियां संक्रमित माँस एवं ठीक से न पका हुआ माँस के खाने से होता है। सालमोनेलोसिस मुख्यतः संक्रमित माँस, दूध, मुर्गा, अंडा के खाने से होता है।

लक्षण – दोनों बीमारियों के लक्षण भी लगभग समान होते है। इनमें पेट दर्द, मरोड़, पानी वाला दस्त, कभी–कभी खून वाला दस्त। यह बीमारी लगभग एक सप्ताह तक चलती है। जानवरों में इ–कोलाई बीमारी से कोई लक्षण नही मिलते है।

बचाव

- दूध, मांस, अंडा ठीक से पका हुआ होना चाहिए।
- पानी बिल्कुल स्वच्छ होना चाहिए। इ–कोलाई गाय के गोबर में मिलता है। मनुष्य को इ–कोलाई से संक्रमित पानी या भोजन के ग्रहन करने से यह बीमारी होती है।

6. रेबीज

यह एक खतरनाक विषाणुजनित छूत का रोग है। यह रोग कुत्ता, गीदड़, बिल्ली, नेवला एवं जंगली मांसाहारी जानवरों को होता है।

फैलाव – रोगग्रस्त पशु के लार में यह विषाणु सर्वाधिक रूप से पाये जाते है। यह रोग मनुष्य एवं स्वस्थ पशुओं में रोगग्रस्त पशुओं के काटने से, चाटने से फैलता है। रोगग्रस्त पशुओं के लार में रहने वाले विषाणु, काटने पर त्वचा, मांस तथा तंत्रिका में प्रवेश करते है। मस्तिष्क के निकट काटने पर लक्षण शीघ्र दिखाई देते हैं। मुँह या चेहरे पर काटने से यह रोग अधिक खतरनाक होता है।

लक्षण – कुत्तों में इसके मुख्य लक्षण हैं – बेचैन दिखना, इधर–उधर घूमना, व्यर्थ में भौंकना, हवा को काटना, भूख न लगना, कमरे के कोने में अंधेरे मे छिपना, जो कुछ मिल जाए उसे काटना, जबड़ा लटका हुआ एवं जीभ बाहर निकला हुआ, खाने पीने की सारी क्षमता समाप्त हो जाती है। लकवा होना, बेहोशी एवं मृत्यु हो जाती है। **गाय–भैंसो में** अधिक सजगता, उत्तेजित होकर दूसरों को काटना, पेशाब करने की प्रबल इच्छा, मोटी आवाज में रंभाना, मुँह से झाग निकलना, बंधे हुए स्थान पर चक्कर काटना, अंत में गिरकर पिछला धर बेकार हो जाना, और मृत्यु हो जाना।

किसी भी रूप में लक्षण दिखाई पड़ने पर पशु लगभग सात दिन में अवश्य मर जाता है।

बचाव

- कुत्तों में रोग से बचने के लिए रोग प्रतिरोधक टीका समय–समय पर अवश्य लगवा देना चाहिए।
- अगर कोई स्वस्थ पशु को रोगग्रस्त पशु काटता है तो स्वस्थ पशु को काटने के बाद का टीका अवश्य लगवा देना चाहिए।
- रोगग्रस्त पशु का दूध नहीं पीना चाहिए।
- कुत्ता काटने के स्थान पर तुरंत 15 मिनट तक साफ चलते हुए पानी से साबुन के साथ धोना चाहिए तथा उस स्थान पर डेटॉल या एंटीसेप्टिक लोशन लगाा देना चाहिए इससे रोग की संभावना कम हो जाती है। पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर इसका इलाज कराना चाहिए।
- मनुष्य को रोगग्रस्त पशु द्वारा काटे जाने पर मानव चिकित्सक से सम्पर्क करना चाहिए।

7. खुरपका या मुँहपका (एफ0एम0डी0) रोग

यह बीमारी जुगाली करने वाले पशुओं तथा शूकरो में विषाणु के द्वारा उत्पन्न होता है जिसमें पशु के मुँह, खुर, अयन थन पर छाले पड़ जाते हैं। इसका विषाणु कई रूपों में पाया जाता है। इस बीमारी से दूध उत्पादन एवं बैलों की काम करने की शक्ति में कमी हो जाती है ।

फैलाव – यह रोग रोगी पशु के सम्पर्क में आने से या छूत लगे पानी, घास–भूसा आदि द्वारा फैलता है। रोगी पशु की देख–भाल करने वाले व्यक्ति भी अपने जूतों, कपड़ों और हाथों द्वारा रोग फैला सकते हैं।

लक्षण – पशुओं में शुरू में बुखार, जुगाली करना बन्द कर देता है। बाद में लार का टपकना, चपचप आवाज आना, जीभ एवं मसूड़ों पर पानीवाले फफोले बनना, खाने में परेशानी, खुर का उतर जाना, शरीर में दुर्बलता, थनों पर फफोले, दूध में कमी, हाँफने के लक्षण मिलते हैं ।

मनुष्य में रोग फैलने के लक्षण कुछ देशों से प्राप्त हुए हैं। मनुष्य में भी मुख, हाथ, पैर पर फफोले बन जाते हैं। आँखों में लालीपन और सूजन भी हो जाती है ।

इलाजः– तुरंत अपने पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें ।

जीभ के छालों को पोटाश 1 ग्राम 3 लीटर पानी मे या फिटकरी 5 ग्राम 1 लीटर पानी में घोल बनाकर दिन में 3–4 बार धोना चाहिये। खुरों को फिनाइल पानी के घोल से साफ करना चाहिये।

बचाव

- स्वस्थ्य पशु को रोगी पशुओं से अलग रखना चाहिये।
- खाने–पीने का भी प्रबंध अलग होना चाहिये।
- रोगी पशुओं की देख–भाल करनेवाले व्यक्ति को स्वस्थ्य पशुओं के पास नहीं जाना चाहिये।
- पशु के साफ–सफाई के दौरान अपने हाथों में दस्ताना पहनना चाहिये या बाद में हाथों को गर्म पानी से अच्छे तरीके से साबुन लगाकर धोना चाहिये ।

8. नीपा फिवर

यह विषाणुजनित बीमारी है। मलेशिया देश के निपा गाँव में सन् 1999 में पहली बार मनुष्य में उसके विषाणु के होने का प्रमाण मिला। यह बीमारी जानवर एवं मनुष्य को प्रभावित करती है। इस बीमारी का प्रकोप सिंगापुर, मलेशिया, बांग्लादेश एवं भारत में है। जानवरों में यह बीमारी सबसे अधिक सुअरों को प्रभावित करती है। कुत्ता, बकरी, तथा घोड़ा, बिल्ली संभवतः भेड़ भी प्रभावित होते हैं।

फैलाव – इस रोग के विषाणु प्राकृतिक रूप में चमगादड़ में बिना लक्षण के रहता है। चमगादड़ के मल–मूत्र एवं लार से संक्रमित किसी भी वस्तु के संपर्क में आने से यह बीमारी जानवरों मे फैलती है। यह विषाणु आहार नली द्वारा या श्वास नली द्वारा सुअरों में फैलता है। मनुष्यों में यह बीमारी संक्रमित फलों (खजूर) के खाने से या बीमार जानवर के संपर्क में आने से फैलती है। मनुष्य से मनुष्य में भी यह बीमारी फैलती है।

लक्षण – सुअरों में साँस लेने में कठिनाई और मुँह खोलकर जोर से आवाज करते हुए तेजी से साँस लेना, बुखार होना, चलने में लड़खड़ाहट, लंगड़ाना, माँसपेशियों में ऐंठन एवं अचानक मृत्यु प्रमुख लक्षण हैं।

मनुष्यों में कुछ लक्षण जैसे सर्दी, सर दर्द, मांसपेशियों में दर्द एवं सर में चक्कर आने से लेकर मृत्यु तक संभव है।

बचाव

- सावधानी के तौर पर बीमार सुअरों के सपंर्क में आने से बचना एवं बीमार सुअरों को अलग से रखना।
- स्वस्थ्य सुअरों को चमगादड़ के सपंर्क में आने से बचाना जैसे कदम उठाए जा सकते हैं।
- मनुष्य को बीमार पशु के सपंर्क में आने में सावधानी रखनी चाहिए।
- फलों को साफ करके खाना चाहिए।
- जंगलों की कटाई को रोकना चाहिए क्योंकि इसी कारण चमगादड़ का संपर्क में आने की संभावनाएँ बढ़ जाती है।

9. बर्ड फ्लू (एवियन इन्फ्लूएंजा)

यह मुर्गीयों की एक धातक विषाणुजनित बीमारी है। यह **H5N1** नामक इन्फ्लुएंजा विषाणु से होता है। यह मुर्गीयों के अलावा अन्य प्रजाति के पक्षी जैसे टर्की, बटेर, कबूतर, गिनी फॉउल, तोता, बत्तख और वन पक्षियों में भी पायी जाती है। यह विषाणु बिना किसी रोग के लक्षण के साथ सुअर, घोड़ों, चूहों एवं मनुष्यों को भी प्रभावित करता है। यह विषाणु दुनिया के कई देशों में मिला है। इस बीमारी के कारण लाखों मुर्गीयों एवं कई मनुष्यों की जानें गई है।

फैलाव – इस रोग के विषाणु मुर्गियों के बीट् में बहुत अधिक मात्रा में पाये जाते हैं जिससे मुर्गी के दाना–पानी, बिछावन दूषित हो जाते है और बीमारी एक स्थान से दूसरे स्थान पर तेजी से फैलती है। दूषित स्वचालित गाड़ियों, मुर्गीयों के पिजंरे व संक्रमित अंडो के द्वारा भी यह रोग फैलता है। प्रभावित फार्म में कार्यरत् श्रमिकों के द्वारा भी एक फार्म से दूसरे फार्म तक फैलता है।

लक्षण – मुर्गीयों में खाँसी एवं जुकाम के साथ–साथ श्वास लेने में कठिनाई होना, कलगी, लोलक चेहरे व पैरों पर सूजन के साथ–साथ नीलापन आना आदि रोग के प्रमुख लक्षण है। यह रोग अतिशीध्र एक फार्म या समूहित पक्षियों में संचालित होता है एवं लगातार कुछ प्रभावित पक्षी मर जाते है। धीरे–धीरे मृत्यु दर भी बढ़ती जाती है जो कि शत्–प्रतिशत तक पहुँच जाती है। अभी तक यह बीमारी मुर्गीयों से ही मनुष्य में फैली है। मनुष्य से मनुष्य में नहीं।

मनुष्यों में आंखों में लालीपन एवं सूजन फ्लू जैसे लक्षण और ईलाज समय पर ना कराने पर मृत्यु हो जाती है।

बचाव

- अचानक मुर्गियों के मृत्यु होने पर या एक ही समय बड़ी मात्रा में मुर्गियों के मरने पर तुरन्त अपने निकटतम् पशु चिकित्सक को सूचना देनी चाहिए।
- जैव सुरक्षा नियमों का कड़ाई से पालन करना चाहिए।
- अनावश्यक बाहरी व्यक्तियों का फॉर्म में आना जाना रूकना चाहिए।

- प्रभावित फार्मो में मुर्गियों का क्रय–विक्रय बंद कर देना चाहिए।
- रोगी मुर्गियों के माँस एवं अंडों का उपयोग नहीं करना चाहिए। अगर मांस और अंडा को अच्छी तरीके से पकाया जाए जो वह अधिक सुरक्षित रहता है।
- कच्चा माँस एवं अंडों के प्रयोग में आनेवाले बर्त्तनों के साथ–साथ हाथों को भली–भांति साबुन एवं डिटर्जेन्ट से धोना चाहिए।
- प्रभावित मुर्गियों को पकड़ते समय या उसके सपंर्क में आने पर मुंह पर पट्टी, दस्ताने, टोपी, अपरन् एवं चश्मा पहनना अतिआवश्यक है।
- मनुष्यों को प्रभावित मुर्गियों के सपंर्क में कम से कम रहना चाहिए खासकर उनके बीट् रक्त आदि से ।

10. जापानीज इन्सेफलाइटिस

यह बीमारी विषाणु से होती है और मच्छरों के द्वारा मनुष्य एवं जानवरों में फैलती है। यह बीमारी घोड़ों, गदहों एवं सुअरों को अधिक प्रभावित करती है।

फैलाव – सुअर और पक्षी इस बीमारी के विषाणु के मुख्य संवाहक है। मच्छर जब रोगग्रसित सुअर या पक्षी को काटने के बाद स्वस्थ जानवर या मनुष्य को काटता है तब यह बीमारी फैलती है। मच्छर ही इस बीमारी को एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य मे फैलाते है।

लक्षण – सामान्यतः **घोड़ों में** कोई खास लक्षण प्रकट नहीं होते हैं परन्तु कभी–कभी दिमाग मे सूजन, बुखार, चलने में असमर्थता, दाँतो का किटकिटाना जैसे लक्षण दिखाई पड़ते है। **सुअरों में** गर्भ से संबंधित समस्याएँ जैसे गर्भपात, स्टीलबर्थ और बाँझपन होती है। अन्य जानवर जैसे गाय, कुत्ता, बिल्ली, पक्षी आदि कोई लक्षण प्रकट नही करते है।

मनुष्यों में इसका प्रभाव सबसे ज्यादा बच्चों पर खासकर 1 वर्ष से 13 वर्ष तक के उम्र के बच्चों में होता है। इसमे दिमाग मे सूजन, तेज बुखार, मिर्गी के दौरे, लकवा और मृत्यु तक हो सकती है।

बचाव

- जानवरों में इस बीमारी से रोकथाम के लिए जापान एवं ताइवान देशों में टीका उपलब्ध है। परन्तु भारत में अभी उपलब्ध नही है।
- इसमें मच्छरों से बचना चाहिए, आस–पास रहने के स्थान पर सफाई रहनी चाहिए।
- मनुष्य को फुलपैंट एवं फुल शर्ट पहनना चाहिए, सोते समय मच्छरदानी या मच्छरों को भगाने वाली दवा का इस्तेमाल करना चाहिए।
- बच्चों को टीका निकटतम स्वास्थ्य केन्द्र से लगवा लेना चाहिए।

11. स्वाईन फ्लू/एन्फ्लूएन्जा

यह सूकरों में होने वाली भयंकर छूत की बीमारी है । इसका विषाणु मुख्यतः सुअरों में ही पाया जाता है । परन्तु कभी–कभी बत्तख, मानव में भी मिलता है।

फैलाव – जो व्यक्ति संक्रमित सुअरों के सीधें सम्पर्क में रहते हैं उन्हें इस बीमारी से ग्रसित होने की अधिक संभावना रहती है। मनुष्य से मनुष्य के बीच खाँसने, छींकने, संक्रमित व्यक्तियों से हाथ मिलाने, छूने, निकट सम्पर्क में आने पर वायु माध्यम से तेजी से फैलती है ।

लक्षण – सूकर में यह अति तीव्र ऊपरी श्वास तंत्र की बीमारी होती है, जिसमें सूकरा के फेफड़े प्रभावित होते हैं। इसमें शरीर का तापमान अधिक हो जाना, साँस लेने में दिक्कत, वजन घटना जैसे लक्षण होते हैं। **मनुष्य में** खाँसना, छींकना, ठंड लगना, उल्टी एवं दस्त होना जैसे लक्षण देखने को मिलते हैं। कभी–कभी न्युमोनिया भी हो सकता है। यह बीमारी कई देशों में फैली है एवं सैकड़ों लोगों की मृत्यु भी हो चुकी है ।

बचाव

- बीमारी होने पर घर से बाहर न जाये विशेषकर, भीड़–भाड़ वाले स्थानों पर ताकि अधिक लोगों से सम्पर्क न हो सके।
- छींकतें समय मुँह पर रूमाल या टीशु पेपर रखें।
- हाथों को साबुन/अल्कोहल/ स्प्रीट/अन्य कीटाणुनाशक घोल से धोएं।
- सूकरों में लक्षण प्रकट होने पर अपने निमटतम पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें ।

12. स्युडो काऊपॉक्स/मिल्कर्स नोड्यूल्स

यह एक विषाणुजनित चर्म रोग है जिसमें गाय के थन और छेमी में घाव/दाने हो जाते है।

फैलाव – दूध दुहने वाले से और संक्रमित दूध वाले बर्तनों से एक गाय से दूसरे गाय में पहुँचती है। स्युडो काउ पॉक्स ग्वाला, देख रेख करने वाले पशु चिकित्सक, बुचरखाने में काम करने वालों को अधिक होने की संभावना रहती है।

लक्षण – शुरूआती लक्षणों में गाय के थनों एवं छेमियों में छोटे लाल उभरे हुए दाने दिखते है। बाद में उन्हें दबाने पर दर्द होता है। यह बीमारी धीरे–धीरे कई हफ्तों में कई समूह में फैलती है। बाद में यह बीमारी अपने आप खत्म हो जाती है। लेकिन जानवरों में फिर से होने की संभावना बनी रहती है।
मनुष्यों में छोटे–छोटे लाल उभरे हुये ऊपर से समतल दाने एक से दो हफ्ते तक हथेली, उँगलियों या बॉहों में दिखती है। कुछ दिनों बाद उसका रंग लाल, नीला और सख्त हो जाता है और अपने आप खत्म हो जाता है। मनुष्यों में प्रतिरोधक क्षमता अपने आप विकसित हो जाती है।

बचाव

- दूध दूहने वाले को हाथों मे दस्ताने पहनना चाहिए।
- एक गाय से दूसरे गाय को दुहने के बीच अपने हाथों को साबुन से अच्छे तरीके से धोना चाहिए।

- किसी भी एंटीसेप्टिक दवाई से छेमी को धोना चाहिए।

13. एकीनोकोकोसिस

यह एक परजीवीजनित रोग है। यह मनुष्य एवं पशु दोनों को प्रभावित करता है। यह बीमारी लोमड़ी, कुत्ता, गीदड़, बिल्ली, भेड़, गाय, सूअर, घोड़ा आदि सभी जानवरों को प्रभावित करता है।

फैलाव – फीताकृमि सीस्ट से संक्रमित मांस को खाने से जानवर बीमार पड़ जाता है तथा उसके मल से चारागाह, सब्जियाँ एवं फल संक्रमित हो जाते है। मल में निकलने वाले अंडे घास के मैदानों पर कई महीनों तक जीवित रहते है और उस घास के मैदानों पर चरने वाले जानवरों के मुख द्वार से उक्त फीताकृमि के अंडे स्वस्थ जानवर के शरीर में प्रवेश कर सीस्ट बना देते है। मनुष्य भी संक्रमित फल एवं सब्जी खाने से बीमार पड़ जाते है।

लक्षण – मांसाहारी जानवर कुत्ता, बिल्ली, लोमड़ी, इत्यादि में कोई लक्षण प्रकट नही होता है परन्तु गाय, घोड़ा, सुअर इत्यादि में रूक–रूक कर दस्त होना, वजन कम होना, इत्यादि जैसे लक्षण पाये जाते है। पेट में पानी का भर जाना, लीवर का बड़ा होना और साँस लेने में कठिनाई होना जैसे लक्षण मिलते है। अगर फल, साग–सब्जी सही ढ़ंग से नही धोया जाता है तो ये बीमारी मनुष्यों में भी आ सकती है। मनुष्यों में लक्षण प्रकट होने में एक महीने से एक वर्ष तक लग सकता है। मनुष्य के शरीर के किसी भी भाग में छोटे से लेकर बड़े सीस्ट का बनना खासकर इससे लीवर प्रभावित होता है। **मनुष्य में** इसके प्रमुख लक्षण पेट दर्द, भूख कम लगना, वजन का घटना इत्यादि है।

बचाव

- अपने कुत्तों एवं बिल्लियों को संक्रमित मांस नहीं खिलाना चाहिए।
- समय–समय पर पालतू जानवरों का अच्छे ढ़ंग से रख–रखाव एवं इलाज कराना चाहिए।
- प्रयास करना चाहिए की पालतू जानवर जंगली जानवरों के सम्पर्क में नही आयें।
- जानवरों को छूने के बाद हमेशा अपने हाथों को गर्म पानी एवं साबुन से धो लेना चाहिए।
- सभी साग–सब्जियों को सही ढ़ंग से धोकर एवं मांस को अच्छी तरीके से पका कर खाना चाहिए।

14. दाद (रिंगवर्म)

इस रोग का कारण फफूंद (फंगस) होता है। यह जानवरों में त्वचा से संबंधित रोग है जो कि सावधानी न रखने पर मनुष्य में हो जाता है। इसमें रूआरहित गोलाकार क्षेत्र बन जाना है जिसमें फफोले, छिलके या पपड़ी के साथ खुजलाहट होती है। पशु दाद वाले भाग को दीवारों, खम्भों आदि के साथ रगड़ता हुआ दिखाई देता है। पपड़ी हटने पर प्रभावित भाग लाल एवं उसमें जलन होता है। मनुष्य में भी यह रोग त्वचा पर देखने को मिलता है ।

पशुओ में दवाई/मलहम लगाते वक्त दस्ताना का प्रयोग करना चाहिये । साफ–सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिये ।

प्राणिरूजा रोगों से कैसे बचा जा सकता है ।

1. अपने पशु को स्वस्थ रखें। किसी भी प्रकार के लक्षण जैसे कि दस्त, उल्टी, खाने में कमी, कमजोरी, खाँसना इत्यादि दिखाई पड़े, तो अविलम्ब निकटतम पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें। समय–समय पर निकटतम पशु चिकित्सक से सलाह ले कर आंतरिक परजीवियों से बचाने के लिए कृमिनाशक दवाई का प्रयोग करें।
2. रोगग्रस्त पशु के लार, जूठा बर्तन इत्यादि के सम्पर्क में आने से स्वस्थ पशु को बचायें । अपने पशु के मल–मूत्र/या अन्य द्रव्य स्राव से कम से कम सम्पर्क में आयें या नहीं तो पूरी सावधानी रखते हुए जैसे कि हाथों में दस्ताना, मास्क, चश्मा, जूते या एप्रौन का प्रयोग करते हुए सम्पर्क में आयें या साफ सफाई करें।
3. प्राणिरूजा रोग से प्रभावित मृत पशु को जला देना चाहिए अथवा दस कि0ग्रा0 चूना एवं दो कि0ग्रा0 नमक मिलाकर गाड़ देना चाहिए।
4. नये पशु को कम से कम दो सप्ताह तक दूसरे पशुओं से अलग रखें।
5. दूध को हमेशा उबाल कर या पाश्चयुराइज्ड दूध का सेवन करें।
6. माँस, अंडा, हमेशा सही ढंग से पका कर खायें।
7. साग, सब्जी, फल इत्यादि को हमेशा साफ पानी से अच्छे से धोकर ही सेवन करें।
8. अपने पशु को और स्वयं को जंगली जानवरों (सियार, गीदड़, बन्दर इत्यादि) से अकारण संपर्क में न लायें।
9. वृक्षारोपण को प्रोत्साहित करें।
10. साफ–सफाई के दौरान झाड़ू लगाने से पहले पानी के छीटें मार दें ताकि धूल–कण हवा में न फैले।
11. ऐसे इलाके जहाँ ज्यादा मच्छर हा, वहाँ मच्छरदानी एवं पूरे बाँह वाली कमीज का प्रयोग करना चाहिए। मच्छरजनित बीमारियों से बचाव के लिए शाम होते ही कुछ समय के लिए मवेशी के स्थान पर धुआँ कर देना चाहिए।
12. व्यक्तिगत साफ–सफाई पर ध्यान रखना चाहिये।
13. अपने शरीर पर किसी भी प्रकार का मामूली खरोंच या घाव को हल्के में न लें और तुरंत मानव चिकित्सक से सम्पर्क करें।
14. अपने पशु को छूने के बाद अपने हाथ को साबुन से अवश्य धोयें।
15. पशुओं को संभावित बीमारी से बचाव के लिए बीमारी के विरूद्ध रोग प्रतिरोधक टीका अवश्य लगाना चाहिए।